रामचरितमानस में मानवीय सम्बन्धापरक मूल्यों के अन्तर्गत- पति-पत्नी

डॉ0 सुधीर कुमार पुण्डीर
एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग
मेरठ कॉलेज, मेरठ
चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, (उ.प्र.)

पवन कुमार
एम0 एड0, नेट, शिक्षा विभाग
मेरठ कॉलेज, मेरठ
चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, (उ.प्र.)

सारांशिका

श्री गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित ''श्रीरामचरितमानस'' मानवीय सम्बन्धों की वह सरयू है, जिसमें समाज के सभी सम्बन्ध कमल बनकर खिले थे और जो तब से लेकर अब तक,इस संसार को अपनी सुगन्ध से सुगन्धित कर रहे हैं। जिसमें माता–पिता, गुरु–शिष्य, पति–पत्नी, भाई–बहन, राजा–प्रजा और मित्रता आदि प्रमुख हैं। जिनके चारों ओर सम्पूर्ण श्रीरामचरितमानस घूमती है। जो संसार के सभी सम्बन्धों को अपने–अपने कर्तव्य मार्ग पर चलना सिखाती है और उन सम्बन्धों को सुदृढ़ भी करती है। श्रीरामचरितमानस हमें बताती है कि अच्छे और सच्चें सम्बन्ध, एक परिवार, समाज और देश की आधारशिला होते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है क्योंकि मनुष्य की जन्म से लेकर मृत्यु तक की सभी गतिविधियों का केंद्र परिवार ही होता है। श्रीरामचरितमानस में सभी पात्रो ने अपने सम्बन्धों को इस प्रकार निभाया है कि जब तक यह संसार रहेगा,तब तक के लिए वे अमर रहेगें। इसमें हमें आदर्श–राजा,गुरु, पिता, माता, भाई, पति, पत्नी, पुत्र, शिष्य, मित्र और प्रजा देखने को मिलतें हैं। जो अपने–अपने सम्बन्धों का निर्वहन करने के लिए अपना सर्वस्व न्योंछावर कर देते हैं।

मुख्य शब्दः मानवीय सम्बंध, मूल्य, सुन्दरत्तम, विश्वास, प्रतिफल

प्रस्तावना

श्री तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस में आदर्श मानवीय सम्बन्धों को स्थापित करने का सफल एवं सुन्दरतम् प्रयास किया है और वेअपने इस प्रयास में पूर्ण रूप से सफल रहे हैं। श्री तुलसीदासजी,इस दिव्य ग्रन्थ में पति–पत्नीके सम्बन्धों के कई आयामों का निरूपण करते हैं। गृहस्थ आश्रम से शुरू होने वाले पति–पत्नी के सम्बन्धों को इस सांसारिक व्यवस्था में बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। एक पति–पत्नी अपना जीवन गृहस्थाश्रम से आरम्भ करते है और उसके दायित्व को अच्छे से पूरा करते है। उसके बाद वे नियम संयम से वानप्रस्थ जीवन को जीते हुए,सावधानीपूर्वक सन्यास आश्रम में प्रवेश करते हैं और मोक्ष तक की यात्रा दोनों साथ में तय करते हैं। श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी जी ने शिव–पार्वती, स्वायम्भुव मनु–शतरूपा, राजा दशरथ और उनकी रानियाँ, श्रीराम–सीता और रावण–मन्दोदरी आदि के गृहस्थ जीवन का सजीव वर्णन किया है। श्रीतुलसीदासजी ने मनुष्य के लिए अनिवार्य नैतिक मूल्यों का विस्तृत रूप से चित्रिण किया है। श्री रामचरितमानस हमें बताती है कि पति–पत्नीको अपने रिश्ते से जुड़ी हर जिम्मेदारी और कर्तव्यका पता होना चाहिए,जिससे हम उनका पालन कर सकें। श्रीरामचरितमानस के बारे में कई लोगों को लगता है कि श्रीराम और सीता का वैवाहिक जीवन अच्छा नहीं था। उनके जीवन में सुख नहीं था, लेकिन ये बात गलत है। भगवान श्रीराम और माता सीता को भौतिक सुखों की जरुरत नहीं थी। उन्होने तो बस अपने कर्तव्य और अधिकारों का ठीक से पालन किया। वे दोनों श्रीहरि विष्णु और माता लक्ष्मी है और उनका कर्तव्य **उद्भवस्थिति–संहारकारिणी** (उत्पत्ति, स्थिति, पालन और संहार करने वाले) हैं। इसीलिए हमें श्रीराम और माता सीता के रिश्ते की गहराई को देखकर अच्छी बातें सीखनी चाहिए।

श्रीरामचरितमानस और पति–पत्नी

श्री रामचरितमानस में शिव–पार्वती के द्वारा गोस्वामी जी ने पति–पत्नी के सम्बन्ध में श्रद्धा और विश्वास के मूल्यों को दिखाया है। यदि पति–पत्नी के जीवन में ये दोनों मूल्य ना हो तो, उनके दांपत्य जीवन का महल जर्जर होकर ढ़ह जाऐगा। पति–पत्नी के रिश्ते में किसी भी प्रकार का छुपाव या अविश्वास नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह दोनों अवगुण अभिशाप का कार्य करते हैं। जिससे बसा–बसाया घर उजड़ जाता है। इसका उदाहरण माता पार्वती (पूर्व जन्म में सती) अपने पति पर विश्वास नहीं करती हैं और भगवान शिव से छिपकर श्री राम की परीक्षा लेती हैं। त्रिकालदर्शी भगवान शिव, यह सब जान लेते हैं और अपनी पत्नी का परित्याग कर देते हैं।

1 ''एहिं तन सतिहि भेट मोहि नाहीं। सिव संकल्पु कीन्ह मन माहीं।।'' 1–56–1

श्रीतुलसीदास जी बतातें हैं कि आदि पुरूष स्वायम्भुव मनु और माता शतरूपा, जिनसे मनुष्यों की यह अनुपम सृष्टि उत्पन्न हुई। उन्होंने अपने पति–पत्नी के सम्बन्ध को हर अवस्था (गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थाश्रम और सन्यास आश्रम)में इस प्रकार निभाया कि वेद और पुराण आज भी उनकी महिमा के गुणगान करते हैं। उन दोनोंके तप में वह शक्ति थी कि जिन्होंने स्वयं नारायण श्री हरि विष्णु को अपने यहाँ (उत्तर जन्म राजा दशरथ और रानी कौशल्या) राम के रूप में अवतार लेने को विवश किया। यह उनके पति–पत्नी के धर्म को पूर्ण निष्ठा से निभाने का ही प्रतिफल था।

2''स्वायंभू मनु अरू सतरूपा। जिन्ह तें भै नरसृष्टि अनूपा।।
दंपति धरम आचरन नीका। अजहुँ गाव श्रुति जिन्ह कै लीका।।'' 1–141–1

श्रीरामचरितमानस में सीता विवाह की शर्त धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने की थी, परन्तु फिर भी श्रीराम ने धनुष को तोड़ दिया। इस पर श्री

तुलसीदासजी कहतें हैं कि दार्शनिक रूप से धनुष अहंकार का प्रतीक है और जब तक हम इस अहंकार को नहीं तोड़ेंगे, हम वैवाहिक जीवन को सफल नहीं बना सकेगें। इसलिए वैवाहिक जीवन में कदम रखने से पहले,होने वाले पति–पत्नी को अपने अहंकार रूपी धनुष को हमेशा–हमेशा के लिए तोड़ देना चाहिए। तब ही विवाह करने वालों को परिपक्व और समझदार माना जायेगा और तभी वें अपना वैवाहिक जीवन शान्तिपूर्वक और सुखपूर्वक बिता सकेगें।

3 ''तनमन बचन मोर पनु साचा। रघुपति पद सरोज चितु राचा।।'' 1–258–2

श्री तुलसीदासजी कहते हैं कि जब श्रीरामजी वन को जा रहे होते हैं, तो सीताजी कहती हैं। हे प्राणनाथ!हे दया के धाम! हे परमसुखों को देने वाले रघुकुल के सूर्य, यहाँ अयोध्या में चाहे मुझे सब प्रकार के सुख या स्वर्ग मिलें। परन्तु हे प्राणनाथ आपके बिना वह सुख भी मुझे दुःख के समान है और वह स्वर्ग भी मेरे लिए नर्क के समान है। इस प्रकार श्री तुलसीदासजी ने बतायां कि सुख हो या दुख हो हरं परिस्थिति में पति–पत्नी को एक दूसरे का साथ देना चाहिए।

4 ''प्राननाथ करुनायतन सुंदर सुखद सुजान।

तुम्ह बिनु रघुकुल कुमुद बिधु सुरपुर नरक समान।।''2–64

श्रीराम के वन गमन का वर्णन करते हुए श्री तुलसीदासजी कहतेहै कि जब श्री राम वन को जाते हैं। तो माता सीता भी पति धर्म निभाने के लिए उनके साथ जाने की जिद करती हैं, परन्तु वह सीधे–सीधे कुछ नहीं कह पाती बस अपने कोमल चरणों से जमीन को कुरेदते और आँखों से आँसू बहते हुए, सकुचाकर कहती हैं कि जिस प्रकार नदी बिना पानी के बेकार है, उसी प्रकार स्त्री, पति के बिना अधूरी है। हे प्रभु! जहाँ आप रहोगें, वहीं मेरे सारे सुख धाम होंगे। क्योंकि आपका चन्द्रमा के समान मुँह देखकर मुझे समस्त सुख प्राप्त होतें हैं।

5''जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरूष बिनु नारी।।

नाथ सकल सुख साथ तुम्हारें। सरद बिमल बिधु बदनु निहारें।।'' 2–64–4

श्रीरामचरितमानस में हमें अनेक स्थानों पर पति–पत्नी के रिश्तों की अनौखी मर्यादा देखने को मिलती है। ऐसे ही जब केवट भगवान राम, माता सीता, भाई लक्ष्मण को नाव से गंगाजी पार कराते हैं। तो वह बहुत खुश होते हैं क्योंकि पूरे संसार को भवसागर से पार करने वाले भगवान श्रीराम को आज मैं नदी पार करा रहा हूँ। परन्तु जैसे ही सब नदी पार जाकर उतरते हैं। तो प्रभु राम कुछ लज्जा महसूस करते हैं कि आज मेरे पास केवट को नदी उतराई देने को कुछ भी नहीं है। तो तभी सीता जी अपने पत्नी धर्म को दिखाती हैं और श्रीराम के संकोच को जानकर आनंद भरे मन से अपनी बहुमूल्य रत्न जड़ित अँगूठी उतार कर प्रभु को देती हैं और कहती है, हे कृपालु यह केवट को दे दीजिए। यह देखकर केवट श्रीराम के चरणों में गिर जाता है और कहता है। प्रभु अपने ऊपर कोई भी भार महसूस मत कीजिए। ये तो मेरा परम सौभाग्य है कि मैं आपके कुछ काम आ सका।

6 ''पिय हिय की सिय जाननिहारी। मनि मुदरी मन मुदित उतारी।।

कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाई।।'' 2–101–2

गोस्वामी जी रिश्तों के मर्म का वर्णन इस प्रकार करते हैं कि एक लड़की के लिए माता–पिता, भाई सभी हित करने वाले होते है। परन्तु वे सब एक सीमा तक ही सुख देने वाले होते हैं। जब उस लड़की की शादी हो जाती है तो उसके सारे सुख–दुख, पूजा–पाठ और उसका मोक्ष उसके पति के साथ जुड़ जाता है। ऐसी स्थिति में स्त्री को पति की सेवा करनी चाहिए और पति को अपनी पत्नी का ध्यान ऐसे रखना चाहिए, जैसा उसका ध्यान उसके माता पिता और भाई रखते थे।

7 ''मातु पिता भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी।

अमित दानि भर्ता बयदेही।

अधम सो नारि जो सेव न तेही।।'' 3–4–3

श्री तुलसीदासजी के अनुसार माता अनसूया, सीता जी को समझातें हुए कहती हैं कि जो पत्नी अपने पति के चरणों में तन, मन और वचन से आदर और प्रेम करनाअपना सबसे बड़ा धर्म समझती है। वही नारी इस संसार में श्रेष्ठ है, इसीलिए सभी पत्नियों को पतिव्रता स्त्री के नियमों का पालन करना चाहिए और ऐसा ही अनुसरण पति को अपनी पत्नी के लिए करना चाहिए। इसी प्रकार आचरण श्रीराम और माता सीता ने किया था।

8 ''एकइ धर्म एक ब्रत नेमा।

कायँ बचन मन पति पद प्रेमा।।'' 3–4–5

श्री राम को जानकी जी की कितनी चिंता और ध्यान था कि जब सुपनखा की नाक काटी जाती है।तब रावण के समान ही बलवान राक्षस खर और दूषण, राम–लक्ष्मण को मारने के लिए आते हैं। तो श्रीराम को सबसे पहले जानकी जी का ध्यान आता है। इसलिए वे लक्ष्मणजी से कहते हैं कि आप धनुष बाण साथ लेकर जानकी जी को पर्वत की गुफा में ले जाओ। जहाँ पर जानकी जी सुरक्षित रहें। इस तरह का भाव सभी पति का अपनी पत्नी के प्रति होना चाहिए।

9 ''लै जानकिहि जाहु गिरि कंदर।

आवा निसिचर कटकु भयंकर।।

रहेहु सजग सुनि प्रभु कै बानी।

चले सहित श्री सर धनु पानी।।'' 3–17–6

श्रीरामचरितमानस में भगवान श्रीराम का माता जानकी के लिए अनन्त,दिव्य और पवित्र प्रेम इस बात से भी दिखता है कि जब वे मनुष्य लीला करने की सोचते हैं। तो उस समय भी उनको माता जानकी जी की चिंता सबसे अधिक होती है और वे यह भी सहन नहीं करते कि रावण जैसा अहंकारी और पापी राक्षस माता–सीता को छुए भी। इसलिए वे सीताजी को अग्नि देव के पास सुरक्षित भेज देते हैं और अग्निदेव से जानकी जी की छाया ले लेते हैं।

10 ''सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला।

मैं कछु करबि ललित नरलीला।।

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा।

जौ लगि करौं निसाचर नासा।।'' 3–23–1

श्री हनुमानजी माता जानकी को श्रीराम का संदेश देतें हुए कहते है कि आप से बिछड़ने का दुख क्या होता है? यह केवल एक वियोगी और दुखी पति (श्रीराम) ही जानतें है। श्रीराम आप को याद करते हुए कहते हैं कि दुख कहने से कम हो जाता है। परन्तु यह दुख, मैं किस से कहू ,क्योंकि दुःख उसी से कहना चाहिए,जो इस दुख को जानता हो, समझता हो और हे प्रिय ऐसा बस मेरा एक मन था।परन्तु वह हमेशा आपके पास रहता है। जिससे मेरे और जानकी जी के बीच स्नेह की डोर बनती है। इतनी बात सुनकर सीता जी अत्यन्त प्रसन्न होती हैं और उनका शरीर जो निर्जीव सा प्रतीत हो रहा था। वह भी सजीव सा लगने लगता हैं। यही तो सच्चे पति–पत्नी के बीच का सम्बन्ध है।

11 ''कहेहू तें कछु दुख घटि होई।

काहि कहौं यह जान न कोई।।

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा।।

सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं।

जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं।।

प्रभु संदेसु सुनत बैदेही।

मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही।।'' 5–14–3,4

श्री तुलसीदासजी कहतें हैं, जब महारानी मन्दोदरी को पता चलता है कि श्रीराम सेना सहित समुन्द्र के पार आ गए हैं। तो उन्हें अपने पति, पुत्रों, परिवार और समस्त लंका के लिए बड़ी चिंता होती है। वे अपने पति रावण को बार–बार समझाती है और एकांत में तो अपने पति के हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हैं कि हे प्रियतम! श्री राम कोई ओर नहीं, स्वयं नारायण श्री हरि विष्णु है। आप उनसे विरोध छोड़कर उन्हें हृदय में धारण कर लो। तो हम सब का कल्याण हो जायेगा। यहाँ मन्दोदरी राक्षस होने के बाद भी अपने पति, परिवार और अपने समस्त राक्षस समाज के लिए कितनी चिंतित होती है। मन्दोदरी कहती है कि श्री राम और आप में सूर्य और जुगनू जैसा अन्तर है। रघुकुल के सूर्यरूपी श्रीराम के सामने आप जुगनू हो। उनके हाथ में संसार की सारी बागडोर है।

12 ''जासु दूत बल बरनि न जाई।

तेहि आएँ पुर कवन भलाई।।

दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी। मंदोदरी अधिक अकुलानी।।

रहसि जोरि कर पति पग लागी।

बोली बचन नीति रस पागी।।

कंत करष हरि सन परिहरहू।

मोर कहा अति हित हियँ धरहू।।'' 5–35–2,3

श्री रामचरितमानस में तुलसीदास जी ने पति–पत्नी के सम्बन्ध को अत्यंत मार्मिक बताया है। उन्होंने कहा जब श्री राम और रावण का युद्ध हो रहा था और रावण मर नहीं रहा था। तो त्रिजटा ने सीता से कहा कि प्रभु रावण के हृदय में बाण क्यों नहीं मार रहें, जिस से वह मर जायें। तो इस पर माता जानकी जी कहती है कि अभी रावण के हृदय में मेरी छवि है। मेरे स्वामी श्रीराम का मेरे लिए दिव्य प्रेम है,इसीलिए प्रभु उसका भी अनिष्ट नहीं कर रहे है। जिसके हृदय में मेरी छवि है।

13 ''प्रभु ताते उर हतइ न तेही।

एहि के हृदयँ बसति बैदेही।।'' 6–98–7

जब श्री राम, रावण का वध कर देते हैं तो उसके बाद माता सीता को लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान आदि प्रसन्नता पूर्वक लाते हैं। तो सबसे पहले श्रीराम अग्नि परीक्षा के लिए कहते हैं। संसार के लिए तो यह अग्निपरीक्षा है परन्तु वास्तव में यह दो बिछड़े हुए पति–पत्नीं का मिलन है। जिनके मिलन का मार्ग अग्नि देव से होकर जाता है। इसलिए माता जानकी प्रज्वलित अग्नि को देखकर तनिक भी क्रोध, दुःखया दर्द महसूस नहीं करती, बल्कि वे प्रसन्न ही होती हैं। क्योंकि वे अब अपने वास्तविक रूप में आने वाली हैं और उसके बाद अपने पति श्रीराम से मिलने वाली हैं।

14 ''पावक प्रबल देखि बैदेही। हृदयँ हरष नहिं भय कछु तेही।।'' 6–108–3

निष्कर्ष

श्री तुलसीदासजी द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस वह अकल्पनीय दिव्य कृति है जो सारे संसार को पग–पग पर रिश्तो की मर्यादा, गरिमा और उनको सुदृढ़ करने की शिक्षा देती हैं। हमें श्रीरामचरितमानस के भिन्न–भिन्न प्रसंगों से, सभी प्रकार के मानवीय सम्बन्धों की शिक्षा प्राप्त होती है। हमें शिव पार्वती के प्रसंग से यह शिक्षा मिलती है कि पति–पत्नी को कभी भी आपस में अविश्वास नहीं करना चाहिए और ना ही कभी झूठ बोलना चाहिए। आज के समय में अधिकांश रिश्ते इसी कारण से टूट रहे हैं। हमें राम और सीता के चरित्र से अनेक प्रकार की शिक्षा मिलती हैकि कैसे माता जानकी राजमहल के ऐसो–आराम और राजभोग छोड़कर अपने पति के साथ वन में भटकने के लिए निकल जाती हैं। क्योंकि उनको पता है कि जहाँ उनके पति हैं, वही उनके तीनों लोक और सारे तीर्थ है। इसी प्रकार श्री रामचन्द्र जी के प्रसंगों से भी हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमें अपनी पत्नी का हर प्रकार और परिस्थिति में ध्यान रखना चाहिए। जितना प्रेम और खुशी उसको (पत्नी) उसके घर में भाई, बहनों और माँ–बाप से मिलती थी, उतनी ही खुशी और प्रेम उसको (पत्नी) ससुराल में भी देना चाहिए। परन्तु आजकल के समाज में बहु के साथ अलग व्यवहार किया जाता है और बेटी के साथ अलग।वैसे ही बहुएँ भी ससुराल को जल्दी से अपना घर नहीं मानती हैं। पति–पत्नी के रिश्तों में इतनी समझ होनी चाहिए कि जैसे जब केवट संवाद के समय माता जानकी, प्रभु श्रीराम के हृदय की बातों को बिना कहे ही समझ लेती हैं। लेकिन आज के समाज में इस तरह की बातों का बहुत अभाव है। आज पति–पत्नी एक दूसरे को जान कर

भी अंजान है, एक दूसरे की भावनाएँ, एक दूसरे के परिवार वालों और रिश्तेदारों को वह वो सम्मान नहीं देते, जो उनको देना चाहिए। श्री रामचरितमानस में प्रभु श्री राम ने विवाह संपन्न होते ही एक दिव्य प्रण लिया कि वे आजीवन एक पत्नी व्रत का पालन करेगें।इससे वे समाज में फैली बहु पत्नी प्रथा को समाप्त करना चाहतें थे।

हमारी संस्कृति में तलाक नाम का शब्द ही नहीं था। परन्तु आज हर समाज में और घर–घर तलाक होते देखने को मिलता है। आज हमारा समाज दिन प्रतिदिन टूटता और बिखरता जा रहा है।''संयुक्त परिवार'' हमारे समाज की पहचान हुआ करते थे। वह संयुक्त परिवार आज यदा–कदा ही देखने को मिलते है। हमारे सभी रिश्तों का उद्धार श्रीरामचरितमानस के मूल्यों में निहित है। यदि हम घर–घर में श्रीरामचरितमानस के ज्ञान और मूल्यों को पहुँचा दें। तो शायद हमारा समाज टूटने और बिखरने से बच जाये। इस प्रकार हम कह सकतें हैं कि श्रीरामचरितमानस रिश्तों की वो सरयू है जिसमें जो भी मनुष्य स्नान करेगा। वह अपने रिश्तों की गरिमा और मर्म को पहचान जायेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बालकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 56, चौ0 1.
2. बालकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 141, चौ. 1.
3. बालकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 258, चौ. 2.
4. अयोघ्याकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 64.
5. अयोघ्याकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 64. चौ 4.
6. अयोघ्याकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 101 चौ0 2.
7. आरण्यकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 4 चौ 3.
8. अयोघ्याकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 4, चौ. 5.
9. आरण्यकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 17, चौ. 6.
10. आरण्यकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 23, चौ. 1.
11. सुन्दरकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 14, चौ. 3,4.
12. सुन्दरकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 35 चौ0 2, 3.
13. लंकाकाण्ड़ रामचरितमानस, दो. 98, चौ. 7.
14. लंकाकाण्ड़ रामचरितमानस, दो108, चौ. 3.